ISSN 2277-5897 SABLOG
PEER REVIEWED JOURNAL

लोक चेतना का राष्ट्रीय मासिक

127

सबलोग

मई 2024 • मूल्य ₹ 40

लोकतन्त्र का युद्ध और आयुध

- मणिपुर,आदिवासी भूमि और कॉरपोरेट मुनाफा
- भारतीय जनता और भाजपा के बीच का चुनाव
- भोगवाद के बाजार में गरीबी का कारोबार

सबलोग-127

वर्ष 15, अंक 3, मई 2024

प्रकाशन 25.04.2024

ISSN 2277-5897 SABLOG

PEER REVIEWED JOURNAL

सम्पादक

किशन कालजयी

संयुक्त सम्पादक

प्रकाश देवकुलिश

राजन अग्रवाल

ब्यूरो

उत्तर प्रदेश : शिवाशंकर पाण्डेय

मध्यप्रदेश : जावेद अनीस

बिहार : कुमार कृष्णन

उत्तराखण्ड : सुप्रिया रतूड़ी

झारखण्ड : विवेक आर्यन

समीक्षा समिति (Peer Review Committee)

आनन्द कुमार

सुबोध नारायण मालाकार

मणीन्द्र नाथ ठाकुर

सफदर इमाम कादरी

मधुरेश

आनन्द प्रधान

मंजु रानी सिंह

महादेव टोप्पो

विजय कुमार

आशा

सन्तोष कुमार शुक्ल

अखलाक 'आहन'

प्रबन्ध निदेशक

अभय कुमार झा

सम्पादकीय सम्पर्क

बी-3/44, तीसरा तल, सेक्टर-16,

रोहिणी, दिल्ली-110089

+918340436365

sablogmonthly@gmail.com, sablog.in

वेब सहायक : गुलशन कुमार चौधरी

सदस्यता शुल्क

एक अंक : 40 रुपए–वार्षिक : 450 रुपए

द्विवार्षिक : 900 रुपए–आजीवन : 5000 रुपए

सबलोग

खाता संख्या-49480200000045

बैंक ऑफ बड़ौदा, शाखा-बादली, दिल्ली

IFSC-BARB0TRDBAD

(Fifth Character is Zero)

स्वामी, सम्पादक, प्रकाशक व मुद्रक किशन कालजयी द्वारा बी-3/44, सेक्टर-16, रोहिणी, दिल्ली-110089 से प्रकाशित और लक्ष्मी प्रिन्टर्स, 556 जी.टी. रोड शाहदरा दिल्ली-110032 से मुद्रित।

पत्रिका में प्रकाशित आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों के हैं, उनसे सम्पादकीय सहमति अनिवार्य नहीं।

पत्रिका अव्यावसायिक और सभी पद अवैतनिक।

पत्रिका से सम्बन्धित किसी भी विवाद के लिये न्यायक्षेत्र दिल्ली।

संवेद फाउण्डेशन का मासिक प्रकाशन

लोकतन्त्र का युद्ध और आयुध

मुनादी / लोकतन्त्र के जीवन के लिए : **किशन कालजयी** 4

जनतन्त्र का पर्व और जनतन्त्र का संकट : **अजय तिवारी** 6

अँधेरे में डूबेगा या रोशनी दिखाएगा भारत : **अरुण कुमार त्रिपाठी** 8

नरेन्द्र मोदी के दस वर्ष : **जावेद अनीस** 10

धर्म की राजनीति और धार्मिक सहिष्णुता : **प्रमोद मीणा** 12

चुनावी राजनीति, आदिवासी हित और भाजपा का वर्चस्व : **कमल नयन चौबे** 14

लोकतान्त्रिक और समतावादी नागरिकता का निर्माण : **संजीव चंदन** 18

राजनीति का कॉरपोरेटीकरणः **कनुप्रिया** 22

सृजनलोक

पाँच कविताएँ : **शंकरानंद,** टिप्पणी : **राजीव रंजन गिरि** 24

विशेष लेख

मणिपुर, आदिवासी भूमि और कॉरपोरेट मुनाफा : **प्रमोद रंजन** 26

राज्य

उत्तर प्रदेश / नयी तासीर लिये लोकसभा चुनाव : **शिवाशंकर पाण्डेय** 30

झारखण्ड / आदिवासी वोटरों पर निगाहें : **विवेक आर्यन** 32

स्तम्भ

चतुर्दिक / भारतीय जनता और भाजपा के बीच का चुनाव : **रविभूषण** 35

यत्र-तत्र / भारतेन्दु-युग में स्वच्छन्द चेतना का प्रवेश : **जय प्रकाश** 39

तीसरी घण्टी / अमली : लोक शैली से लोक स्वर का सफर : **राजेश कुमार** 42

कथित-अकथित / सूडान में गृह युद्ध का मौजूदा दौर : **धीरंजन मालवे** 45

कविताघर / कविता में मौन की जगह : **प्रियदर्शन** 47

विविध

समाज / भोगवाद के बाजार में गरीबी का कारोबार : **प्रेम सिंह** 49

प्रासंगिक / जनहित में जारी जन-घोषणापत्र : **आशीष कोठारी** 53

मुद्दा / साम्प्रदायिकता और साहित्य : **प्रवीण कुमार** 55

शोध लेख / हिन्दी साहित्य में स्त्री प्रतिनिधित्व का प्रश्न : **काजल** 59

सिनेमा / स्त्री-भूमिका के प्रश्न : **रक्षा गीता** 62

पुस्तक समीक्षा / अक्क महादेवी के बहाने एक मुकम्मल किताब : **गजेंद्र कान्त शर्मा** 65

लिये लुकाठी हाथ / आटा से महँगा हुआ डाटा : **रेखा शाह आरबी** 66

आवरण : **शशिकान्त सिंह**

अगला अंक : सम्पूर्ण क्रान्ति की आधी सदी

लोकतन्त्र के जीवन के लिए

देश और दुनिया के लोग तय रूप से यह मान रहे हैं कि भारत में लोक सभा के लिए यह जो चुनाव हो रहा है वह पहले के तमाम आम चुनावों से बिल्कुल अलग है। चुनावी अभियान के शुरूआती दौर में ही जो सत्ताधारी राष्ट्रीय जनतान्त्रिक गठबन्धन भारतीय जनता पार्टी के नेतृत्व में 'अबकी बार 400 पार' के नारे पर झूम रहा था वहीं दूसरे दौर के मतदान के बाद थोड़ा पिछड़ता हुआ दिख रहा है। दूसरी ओर विपक्षी पार्टियाँ बहुत देर से एकजुट होती हुई दिखीं, आपस में ताल-मेल का घोर अभाव रहा, लेकिन प्रचार अभियान में वे पहली बार लोकतन्त्र और संविधान के संकट को चुनावी मुद्दा बनाने में एक हद तक सफल हो गयी हैं।

आम चुनाव में राजनीतिक पार्टियाँ मतदाताओं को लुभाने के लिए अपने घोषणा पत्र में 'आदर्श' लिखती रहती हैं। क्षेत्र के मतदाता या चुनाव आयोग–कोई उनसे हिसाब माँगने वाला नहीं है कि आपने जो वायदे किये थे वे पूरे हुए या नहीं। 2014 में भाजपा ने अपने चुनावी अभियान में जो वायदे किये थे उनमें से कई अभी तक अधूरे पड़े हुए हैं। 2019 में फिर कुछ नये वायदे जोड़े गये वे भी पूरे नहीं हुए। 2024 के मौजूदा लोक सभा चुनाव में लोगों का अनुमान था कि भाजपा राम मन्दिर के नाम पर ही वोट माँगेगी। 25 सितम्बर 1990 को लालकृष्ण आडवाणी के नेतृत्व में राम रथयात्रा की जो मुहीम सोमनाथ से शुरू हुई थी वह 22 जनवरी 2024 को अयोध्या में तब पूरी हुई जब रामलला को मन्दिर में प्रतिस्थापित किया गया। पिछले 34 वर्षों से भाजपा पर यह आरोप लगता रहा था कि राम मन्दिर के निर्माण में भाजपा की दिलचस्पी नहीं है, उसकी दिलचस्पी इस मुद्दे को बनाए रखने में है ताकि राम के नाम पर चुनावी राजनीति की जा सके। 22 जनवरी 2024 को अयोध्या में जो भव्य कार्यक्रम हुआ उसे देखकर भाजपा के समर्थकों और विरोधियों, दोनों को यह लगा था कि आगामी लोकसभा चुनाव में भाजपा इस भव्यता को भुनाएगी। लेकिन आश्चर्यजनक रूप से राम मन्दिर का मुद्दा इस आम चुनाव में गौण हो गया है। पिछले 10 वर्षों के कार्यकाल में राष्ट्रीय जनतान्त्रिक गठबन्धन की सरकार द्वारा संचालित कल्याणकारी योजनाओं ने निम्नवर्गीय लोगों को जाति और धर्म से परे जाकर काफी प्रभावित किया है। ये भाजपा के जमीनी मतदाता हैं जिनकी बदौलत भाजपा आज तक जीतती रही है। भाजपा चाहे तो तीन तलाक और जम्मू कश्मीर में धारा 370 को हटाने के मामले को प्रचार परियोजना में शामिल कर सकती है, लेकिन ये मुद्दे भी उनके चुनावी अभियान के प्रमुख प्राथमिकताओं में नहीं हैं। समझने की बात यह है कि भाजपा अनजाने में यह कोई चूक नहीं कर रही है, यह उसकी सोची-समझी चालाकी है और वह अपने नये हथियार से इस चुनावी जंग को जीतना चाहती है।

अपने गठन (27 सितम्बर 1925) के शुरूआती दिनों से ही हिन्दू राष्ट्र का निर्माण राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की राजनीतिक परियोजना रही है। इस परियोजना के पड़ाव के रूप में इस संगठन को महत्त्वपूर्ण सफलता तब मिली जब 1998 में राष्ट्रीय जनतान्त्रिक गठबन्धन की सरकार बनी और अटल बिहारी वाजपेयी प्रधानमन्त्री बने। लेकिन सच्चे अर्थों में भाजपा का शासन 2014 से प्रारम्भ हुआ जब 282 सीटें लेकर भाजपा ने स्पष्ट बहुमत प्राप्त किया और तेज तर्रार नेता नरेन्द्र मोदी को प्रधानमन्त्री बनाया। वाजपेयी और मोदी दोनों संघ के कार्यकर्त्ता रहे हैं, लेकिन दोनों के व्यक्तित्व में जमीन आसमान का अन्तर है। भाजपा का होते हुए भी अटल बिहारी वाजपेयी देश के प्रधानमन्त्री लगते थे। यही अटल बिहारी वाजपेयी थे जिन्होंने गुजरात दंगे के बाद (तब नरेन्द्र मोदी गुजरात के मुख्यमन्त्री थे) कहा था कि राजधर्म का निर्वाह नहीं हुआ। दूसरी तरफ नरेन्द्र मोदी ने अपनी छवि ऐसी बना ली है कि वे देश के प्रधानमन्त्री से ज्यादा हिन्दुओं के प्रधानमन्त्री लगते हैं। उनकी इस आक्रामक छवि का लाभ भाजपा को भरपूर मिला है। इसलिए भाजपा इस हथियार की धार को कम नहीं करना चाहती है।

आठवीं लोकसभा के चुनाव (1984) में जिस भाजपा को सिर्फ दो सीटें मिली थीं उसी भाजपा ने 17वीं लोकसभा के लिए 2019 के चुनाव में 303 सीटों पर जीत हासिल की। काँग्रेस की ऐसी बुरी हालत रही कि 14 राज्यों और केन्द्र शासित राज्यों में उसे एक भी सीट नहीं मिली। काँग्रेस की इस दुर्दशा के लिए निश्चित रूप से काँग्रेस का परिवार केन्द्रित नेतृत्व जिम्मेवार है। काँग्रेस के कई कद्दावर नेता जिन्होंने थोड़ी आवाज उठायी, वे या तो बाहर कर दिए गये या पार्टी के भीतर ही हाशिये पर रहने के लिए मजबूर कर दिए गये। ऐसे में काँग्रेस का जनाधार कम होना ही था, इतना कम हुआ कि वह अब भाजपा के लिए कोई कारगर चुनौती पेश करने में लगभग अक्षम है। यह काँग्रेस के लिए ही नहीं बल्कि भारतीय लोकतन्त्र के लिए भी अशुभ संकेत है। किसी भी लोकतन्त्र की सफलता और सुचारू संचालन के लिए एक मजबूत विपक्ष का होना अनिवार्य है। संसद के भीतर अगर कारगर विपक्ष नहीं है तो मीडिया विपक्ष की भूमिका का निर्वाह कर सकता है लेकिन दुर्भाग्यवश मीडिया भी सत्ता के सामने नतमस्तक है। कुछेक अपवादों (रवीश कुमार, पुण्य प्रसून वाजपेयी, अजीत अंजुम, आरफा खानम शेरवानी, अभिसार शर्मा, ध्रुव राठी आदि) को यदि छोड़ दें तो मीडिया ने सत्ता से सवाल करना बन्द कर दिया है। दुखद आश्चर्य तो यह कि मीडिया विपक्ष से ही सवाल करता हुआ दिख रहा है। आज की तारीख में चुनाव लड़ना इतना महँगा हो गया है कि कोई सामान्य

व्यक्ति भारत में चुनाव नहीं लड़ सकता, चाहे वह पंचायत और वार्ड का ही चुनाव क्यों न हो। मौजूदा राजनीति में सिर्फ नेता भ्रष्ट नहीं हुआ है, जनता (मतदाता) उनसे ज्यादा भ्रष्ट हो गयी है। पैसे के लालच या जाति के नाम पर वोट करना भ्रष्टाचार नहीं तो और क्या है?

हालाँकि भारतीय मतदाताओं ने कई बार अपनी परिपक्व मानसिकता का परिचय दिया है। इतिहास इस बात का गवाह है। सिर्फ दिल्ली ही नहीं कई और प्रदेशों में भी ये उदाहरण मिल जाएँगे कि राज्य की सरकार के गठन के लिए जिस पार्टी को मतदाताओं ने वोट किया केन्द्र की सरकार के गठन के लिए उसे नहीं, दूसरी पार्टी को वोट किया। 1975 में जब इन्दिरा गाँधी की सरकार ने आपातकाल लगाया था तो 1977 के चुनाव में भारत के मतदाताओं ने कड़ा निर्णय लिया था और काँग्रेस बुरी तरह हारी थी। इन्दिरा गाँधी और उनके पुत्र संजय गाँधी भी चुनाव हार गये थे। मोरारजी देसाई के नेतृत्व में जनता पार्टी की सरकार बनी थी। जनता पार्टी की सरकार जब अपने ही आन्तरिक तकरार के कारण ज्यादा दिनों तक नहीं चली तो इन्हीं मतदाताओं ने फिर से इन्दिरा गाँधी की सरकार बना दी थी। राजीव गाँधी के कैबिनेट में ही मन्त्री रह चुके विश्वनाथ प्रताप सिंह ने बोफोर्स दलाली के नाम पर भ्रष्टाचार को मुद्दा बनाया और काँग्रेस से अलग होकर जनमोर्चा बनाया तो मतदाता उनके साथ हो गये और वे प्रधानमन्त्री बने। इसलिए मतदाताओं की समझ को कभी कम करके नहीं आँकना चाहिए।

यह आम चुनाव इस मामले में नायाब है कि भाजपा को इस चुनाव में ईडी और सीबीआई का भी सहयोग प्राप्त है। चुनाव आयोग की भी सहानुभूति भाजपा के ही साथ है। 44 दिनों का लम्बा चुनावी शिड्यूल आज तक के चुनावी इतिहास में पहली बार हुआ है। उत्तर प्रदेश की 80 सीटों पर सात चरणों में और पश्चिम बंगाल की 42 सीटों और बिहार की 40 सीटों पर भी सात चरणों में, वहीं महाराष्ट्र की 48 सीटों पर पाँच चरणों में और तमिलनाडु की 39 सीटों पर चुनाव मात्र एक चरण में; इस शिड्यूल से चुनाव आयोग की निष्पक्षता सन्देह के घेरे में आ जाती है, और यह सन्देह तब और गहरा हो जाता है जब आयुक्त की नियुक्ति ही संशय के वातावरण और घपले की आहट में हुई हो।

भाजपा के 50% यानी 150 वर्तमान सांसदों और मन्त्रियों के टिकट खराब परफार्मेंस के कारण काटे जाने की खबर है। आश्चर्य की बात यह है कि मन्त्रियों के परफॉर्मेंस जब खराब हैं तो प्रधानमन्त्री का अच्छा कैसे हो गया? मन्त्रिमण्डल पर प्रधानमन्त्री की कैसी निगरानी थी कि पाँच वर्षों तक उन्हें मन्त्रियों के खराब परफॉर्मेंस का पता ही नहीं चला। भाजपा के 411 प्रत्याशियों में से 116 दूसरे दलों से आए हुए हैं, उसमें 37 तो काँग्रेस से ही हैं। काँग्रेसियों के बूते ही भाजपा सरकार बनाएगी तो लोग काँग्रेस को ही वोट क्यों न करें? भाजपा प्रतिबद्ध कार्यकर्ताओं वाली पार्टी मानी जाती है। कार्यकर्ताओं की प्रतिबद्धता पर नेतृत्व की यह चोट मारक ही नहीं आन्तरिक कलह का कारण भी है। भाजपा के एक घोर समर्थक ने एक निजी बातचीत में कहा कि नरेन्द्र मोदी ने चाहे और जो कुछ किया हो अपने दस वर्ष के कार्यकाल में भाजपा को दस वर्ष पीछे कर दिया। उनका आशय यह था कि विधायकों और सांसदों की संख्या से सत्ता तो बन सकती है, लेकिन पार्टी का निर्माण उसकी नीति, नियत और भीतरी संरचना से होता है। इस मामले में भाजपा के भीतर बड़े स्तर पर तोड़-फोड़ है। पार्टी के कद्दावर नेताओं और मन्त्रियों के कद को छोटा किया जा रहा है, उन्हें पार्टी से बाहर किया जा रहा है, अपमानित किया जा रहा है। इसलिए आज की तारीख में भाजपा एक राजनीतिक पार्टी कम, दो व्यक्तियों की एक कम्पनी ज्यादा लगती है। चुनावी इतिहास में यह पहली बार हो रहा है कि भाजपा सिर्फ अपने विपक्षियों से नहीं, भाजपा से भी लड़ रही है।

एलेक्टोरेल बॉण्ड के मामले में भाजपा की संलिप्तता जिस तरह से उजागर हुई थी तो लग रहा था कि यह भाजपा के विरुद्ध भ्रष्टाचार का बड़ा चुनावी मुद्दा बनेगा, लेकिन यह सम्भव इसलिए नहीं हो सका क्योंकि दूसरी राजनीतिक पार्टियाँ भी चुनावी चन्दे की दलदल में धँसी हुई हैं। जिस राजनीतिक पार्टी की जैसी हैसियत रही उसी हिसाब से उद्योगपतियों ने उन्हें एलेक्टोरल बॉण्ड चन्दे के रूप में दिये। चन्दा पाने के मामले में भाजपा सबसे आगे रही और उसने एलेक्टोरल बॉण्ड से 6500 करोड़ से अधिक का (कुल चन्दे का लगभग 54%) चन्दा प्राप्त किया, जबकि काँग्रेस ने 1120 करोड़ से अधिक (लगभग 9.3%), तृणमूल काँग्रेस ने 1090 करोड़ से अधिक(लगभग 9.1%) तथा अन्य पार्टियों ने इससे कम राशि प्राप्त की। काँग्रेस या अन्य विपक्षी पार्टियों ने एलेक्टोरेल बॉण्ड चन्दे के रूप में न लिया होता और उसे न भुनाया होता तो यह सवाल उठाने का उन्हें नैतिक बल होता। लेकिन भाजपा का पाप ज्यादा घनघोर इसलिए है कि जिन कम्पनियों या व्यावसायिक घरानों ने चन्दे की बड़ी रकम दी, उन्हें पहले ईडी की नोटिस भेजकर आतंकित किया गया। यह अवैध वसूली नहीं तो और क्या है?

संसदीय राजनीति में यह बात आम हो गयी है कि जो पार्टी सत्ता में होती है वह सरकारी संस्थाओं का राजनीतिक इस्तेमाल करती ही है। लेकिन भाजपा जिस बेशर्मी से ईडी, सीबीआई, न्यायपालिका और आयकर विभाग का अपने राजनीतिक फायदे के लिए इस्तेमाल करती रही है, वह लोकतन्त्र के लिए इस मायने में ज्यादा खतरनाक है कि आनेवाले दिनों में कोई दूसरी पार्टी सत्ता में आयी तो वह इससे भी नीचे जा सकती है।

भाजपा इस मुगालते में है कि सभी सरकारी संस्थाएँ, मीडिया उसके साथ हैं तो उसकी लड़ाई आसान है। सच्चाई यह है कि जनता समझ रही है कि सूरत में किस तरह काँग्रेस उम्मीदवार के नामांकन को रद्द कर भाजपा के उम्मीदवार को निर्विरोध जिताया गया है, इंदौर में भी डरा-धमका कर काँग्रेसी उम्मीदवार से नामांकन वापस करवा कर उन्हें भाजपा में शामिल कराया गया। भला हो एसयूसीआई (कम्युनिस्ट) के उम्मीदवार अजीत सिंह पंवार का जो धमकी के बावजूद मैदान में डँटे हुए हैं। ईडी ईमानदारी और निष्पक्षता से काम करती तो सिर्फ अरविन्द केजरीवाल और हेमन्त सोरेन ही नहीं, भाजपा के और भाजपा में आये कई नेता भी जेल में होते। जनता को अपने विवेक से यह तय करना चाहिए कि उनका वोट किसी तिकड़मी तानाशाह को और मजबूत करेगा या लोकतन्त्र को जिन्दा रखेगा?

(किशन कालजयी)

आवरण कथा

जनतन्त्र का पर्व और जनतन्त्र का संकट

अजय तिवारी

समाज का यह ध्रुवीकरण जनतन्त्र और स्वयं देश के भविष्य के लिए हितकर नहीं है। लेकिन वस्तुस्थिति यही है। सच पूछिए तो यथार्थ वही नहीं होता जो प्रत्यक्ष दिखता है, यथार्थ वह भी होता है जो लोगों के मानस में विद्यमान होता है और चुनाव जैसी जनतान्त्रिक परिघटना के माध्यम से देश की शासन प्रणाली का निर्णय करता है।

संसदीय चुनाव 2024 केवल केन्द्र की सत्ता का निर्णय नहीं करेगा बल्कि भारतीय जनतन्त्र का भविष्य भी निर्धारित करेगा। अपनी कहूँ तो अपेक्षा है सत्ता में परिवर्तन की लेकिन आशंका है अनापेक्षित के घटित होने की। अभी पूर्वी उत्तर प्रदेश की यात्रा में इस बात का स्पष्ट अनुभव हुआ। जैसे पहले कहा जाता था कि बंगाल जो आज सोचता है बाकि देश उसे कल सोचता है। वैसे ही अब यह स्थापित है कि केन्द्र की सत्ता का रास्ता उत्तर प्रदेश से होकर जाता है। अफसोस की बात यह है कि उत्तर प्रदेश की जनता पर चाहे धार्मिक विश्वास के कारण हो या राशन के मुफ्त वितरण की कार्रवाई के कारण, इस समय किसी भी राजनीतिक दल, किसी भी सामाजिक-राजनीतिक मुद्दे से ऊपर 'मोदी' के लिए समर्थन की लहर है। यह समर्थन राममन्दिर के निर्माण के कारण ही नहीं, 'मुस्लिम आतंक' से छुटकारा दिलाने के कारण भी है! जनमानस में साम्प्रदायिक विद्वेष इस तरह व्याप्त है कि कोई कुछ सुनने को तैयार नहीं है। यह स्थिति अन्यत्र भी है। खुद मोदी के गुजरात में 'हिन्दुत्व की प्रयोगशाला' इतनी सफल हुई कि आज नमाजियों को पुलिस सड़क पर बूटों की ठोकर मारती है और विरोध की बात छोड़, जनता का मौन समर्थन मिलता है।

समाज का यह ध्रुवीकरण जनतन्त्र और स्वयं देश के भविष्य के लिए हितकर नहीं है। लेकिन वस्तुस्थिति यही है। सच पूछिए तो यथार्थ वही नहीं होता जो प्रत्यक्ष दिखता है, यथार्थ वह भी होता है जो लोगों के मानस में विद्यमान होता है और चुनाव जैसी जनतान्त्रिक परिघटना के माध्यम से देश की शासन प्रणाली का निर्णय करता है। समस्या यह है कि 2002 के बाद गैर-भाजपा विपक्ष ने मोदी की निन्दा में जितना श्रम किया उतना शासन में रहने पर वैकल्पिक राजनीति के विकास में या विपक्ष में रहने पर वैकल्पिक संस्कृति के प्रोत्साहन में नहीं किया। यह बात सर्वविदित है कि विभाजनकारी राजनीति का विकल्प दूसरी विभाजनकारी राजनीति नहीं हो सकती। गुजरात में भीषण साम्प्रदायिक उत्पात के बाद वहाँ उपस्थित एकमात्र राजनीतिक विकल्प काँग्रेस ने मानो हथियार डाल दिए और विशाल हिन्दी प्रदेश में जाति आधारित राजनीति ने धर्मनिरपेक्ष राजनीतिक विकल्पों को पंगु बना दिया। जिस वामपन्थ को वैकल्पिक नीतियों से एक राष्ट्रीय 'नैरेटिव' बनाना था, वे खुद अपनी मूल विचारधारा से दूर जाकर 'सामाजिक न्याय' के नामपर जाति की राजनीति के पीछे चलने लगे।

हम 2019 में देख चुके हैं कि लाखों लोगों की मौत और करोड़ों लोगों के दरबदर होने की पीड़ा भी बड़े साम्प्रदायिक 'नैरेटिव' और छोटे लाभों के चक्र में तिरोहित हो गयी और खुद प्रधानमन्त्री द्वारा गढ़े गये मुहावरे 'मोदी के नमक' पर लोग एकतरफा झुक गये। बेशक, यह परिस्थित उत्तर भारत में थी लेकिन

लेखक हिन्दी के प्रसिद्ध आलोचक हैं।
+919717170693
tiwari.ajay.du@gmail.com